ARYAVART SHODH VIKASH PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 191-193
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-8, No.-II, Issues-IX YEAR- Dec-2017

राष्ट्रीय काव्य-धारा के समर्थ कवि : 'दिनकर'

डॉ0 सुधा राय
एसो0 प्रो0– अध्यक्ष : हिन्दी–विभाग,रा0मो0ग0पी0जी0 कॉलेज, फैजाबाद, अयोध्या (उ0प्र0) भारत

छायावाद की कवि–त्रयी में केवल प्रसाद, निराला और पन्त के नाम ही गिने जाते हैं। यह किसी सीमा तक ठीक भी है। इस त्रयी से आगे बढ़ने पर "राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा" के पुरोधा कवि के रूप में सर्वप्रमुख नाम डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' का ही आता है। सच तो यह है, कि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की काव्य चेतना और साहित्यिक धरोहर या मशाल को आगे की पीढ़ियों तक हस्तान्तरित करने वाले सब कवियों में इनका ही नाम अग्रगण्य जान पड़ता है। इन्होंने लगभग बीस काव्य–ग्रन्थ रचकर माँ भारती के भाण्डार की श्री–वृद्धि की है, वहाँ इतिहास और संस्कृति से सम्बद्ध संस्कृति के चार अध्याय और यात्रा संस्मरणों की पुस्तकें यथा देश–विदेश, मेरी यात्राएँ, लोक देव नेहरू और बालोपयोगी पुस्तकों का भी प्रणयन किया है। ऐसे कवि के बारे में विस्तार से लिखना, जानना, छानना आवश्यक है। राष्ट्रीय काव्य धारा के समर्थ कवि डॉ० रामधारी सिंह 'दिनकर' का जन्म बिहार प्रान्त में जनपद मुंगेर सिमरिया नामक गाँव में तीस दिसम्बर, उन्नीस सौ आठ ईस्वी (30 दिसम्बर 1908) को हुआ था। इनके पिता रवि सिंह उदार, सहज, सरल, प्रतिभावान और समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से एक थे। संस्कार का प्रभाव आने वाली पीढ़ी पर अवश्य प्रभावी होता है। 'दिनकर' पर पिता के जीवन दर्शन का प्रभाव पड़ा। बचपन की कोमल भावनाओं से सम्पृक्त दिनकर की आँखे जब संसार को पहचानने की कोशिश कर रहीं थीं, तभी अचानक पिता का साया पुत्र के सिर से हट गया और माँ ने अपनी ममता की गोद में धैर्य, साहस के साथ बच्चे का पालन–पोषण किया।

सिमरिया प्रकृति के अंचल में बसा हुआ एक छोटा–सा गाँव है। यहाँ प्रकृति का अनमोल सौन्दर्य–वैभव देखने योग्य है। ऐसे रमणीय वातावरण में कवि का बाल रूप आकाश और धरती को उजागर करने के लिए शक्ति–ज्योति–पुंज की भाँति अग्रसर हुआ बचपन के इस प्राकृतिक स्वभाव को जीवन पर्यन्त कभी छोड़ नहीं पाये।

पटना कॉलेज से स्नातक की उपाधि प्राप्त कर कवि दिनकर विराट चेष्टाओं के साथ व्यावहारिक जगत् में सफलता पाने के लिए साहित्यिक क्षेत्र में पदार्पण किया। अंग्रेजों के शासन में प्रतिभाशाली युवकों के लिए जगह न थी। (आज देश स्वतन्त्र हो गया, किन्तु भारतीय अंग्रेजों के शासन काल में प्रतिभा का हनन हो रहा है।) अतः दिनकर जी को भी अनुकूल स्थान की प्राप्ति न हो सकी। विवशता के कारण रोजी–रोटी हेतु ही सही परिवार का बोझ ढोने के लिए इन्हें रजिस्ट्रार का पद स्वीकार करना पड़ा। स्वतन्त्र चिन्तन थोड़ा बाधित हुआ, शक्तिशाली व्यक्ति अधिक समय तक आरोपित बोझ नहीं बर्दाश्त कर पाता। अतः दिनकर जी ने 1952 (१९५२) में नौकरी से त्याग–पत्र दिया। इसी बीच में राज्य सभा की सदस्यता मिल गयी। 1956 गठित 'राष्ट्रभाषा आयोग' के सदस्यों में इनका भी नाम था। भारत सरकार ने कवि दिनकर 'पद्मभूषण' की उपाधि से अलं.त किया। ज्ञानपीठ का सर्वोच्च भारतीय पुरस्कार भी प्राप्त हुआ।

'दिनकर' की काव्य .तियों में "प्रणभंग", (1929) 'रेणुका' (1935) 'हुंकार' (1939) 'रसवन्ती' (1940), 'कुरूक्षेत्र' (1946), 'रश्मिरथी' (1952), 'नीलकुसुम' (1954), उर्वषी महाकाव्य (1961), 'परशुराम की प्रतीक्षा' (1963), कोयला और कवित्त (1946) इनके अतिरिक्त अन्य कविता–संग्रह है, यथा द्वन्द–गीत, सामधेनी, बापू, इतिहास के आँसू, दिल्ली, नीम के पत्ते, सीपी और शंख, नये सुभाषित, मृत्ति–तिलक, आत्मा की आँखे, एकायन, मगध–महिमा, धूप और धुआँ, बारदोली–विजय, कवि श्री, चक्रवाल, हारे को हरिनाम इत्यादि है। इन सब कृतियो के अतिरिक्त निबन्ध संग्रह भी है– 'अर्द्धनारीश्वर', 'मिट्टी की ओर', 'रेती के फूल', 'हमारी सांस्.तिक एकता', 'राष्ट्र भाषा और राष्ट्रीय एकता', 'काव्य की भूमिका', 'पन्त, प्रसाद और निराला', 'शुद्ध कविता की खोज'। इन सब ग्रन्थों से वस्तुतः बहुमुखी प्रतिभा के धनी लेखक आलोचक, इतिहासकार, निबन्धकार और कवि घोषित किये जा सकते हैं।

'दिनकर' उस दिनकर की भाँति थे, जो भोर के सूर्य के बाद प्रचण्ड आतप से संसार के मौसम के अनुसार सुख–दुःख देने वाला होता है। अर्थात् सूर्य के पर्याय ने जिस युग में कविता का शुभारम्भ किया। वह भारतीय स्वतन्त्रता–संग्राम का युग था। देश बन्धन मुक्त स्वतन्त्रता के 'विहान' में आँखें खोलना चाहता था। इस स्वप्न की पूर्ति क्रान्तिकारी साहित्यकारों एवम् क्रान्तिवीरों द्वारा होनी थी। मातृभूमि की पुकार पर अनेक युवक बलिवेदी पर हवन होने हेतु चल पड़े। दिनकर में प्रचण्ड तेज, और ओज की गरमाहट थी। उच्चादर्श को लेकर निरन्तर जूझने की सामर्थ्य थी।

अनुरूपी लेखक

जुझारू कवि ने इस महासमर में भाग लिया। "इतिहास के आँसू" में अतीत के उज्ज्वल अध्यायों पर विचार करता है, इसी क्रम में वह अतीत पर गर्व और वर्तमान पर खर्द व्यक्त कर रहा है–

तू पूछ अवध से राम कहाँ ? वृन्दा बोलो घनश्याम कहाँ ? ओ ! मगध कहाँ मेरे अशोक वह चन्द्रगुप्त बलधाम कहाँ ? तुझे याद है चढ़े पदों पर, कितने जय सुमनों के हार।

गाँव में जन्में भारतीय समाज में सम्बन्ध होने के कारण दिनकर को दुःख, दैन्य, गरीबी का नग्न चित्र देखने को मिला नन्हें, दुध मुँहे शिशु को माँ के स्तन से दूध नहीं मिलता, कितने अबोध शिशु दुनियाँ देखने से पहले मुत्यु का आलिंगन कर लेते हैं। जिस धरती पर अमीर वर्ग खुशी का त्योंहार मनाता है, गरीबों की कुटिया में रोटी की गुहार मची हो, जहाँ आदमी अभागे इन्सानों को ठोकर मारकर, कुत्ते को गले लगाता दुलराता हो। वहाँ 'दिनकर' जैसा कवि तीखा प्रहार किये बिना नहीं रह सकता है, कह उठता है, मन चीत्कार करता है, ह्रदय और वाणी से फूट पड़ता है। स्वर – "श्वानों को मिलता दूध वस्त्र भूखे बालक अकुलाते हैं। माँ की हड्डी से चिपक ठिठुर जाड़े की रात बिताते हैं। झर गयी पूँछ रोमान्त झरे, पशुता का झरना बाकी है। कह दे शंकर से आज करें वे प्रलय–नृत्य फिर एक बार। सारे भारत में गूँज उठे हर–हर बम–बम का महोच्चार पर हाय! मनुज के भाग्य अभी तक खोटे के खोटे हैं। हम बड़े बहुत बाहर, भीतर लेकिन छोटे के छोटे हैं।"

उपर्युक्त कविताएं मनुष्य को आत्म साक्षात्कार करने पर विवश कर देती हैं, कितना प्रखर चिन्तन था। दिनकर भारत की जमीन पर स्वर्ग उतार पायें या न पायें, अलग से सोचने की बात है, लेकिन काव्य के माध्यम से व्यावहारिक जीवन में संघर्ष करते दिखायी देते हैं –

"दूध–दूध ओ वत्स मन्दिरों में बहरे पाषाण यहाँ है। दूध–दूध तारे बोलें इन बच्चों के भगवान् कहाँ हैं? हटो व्योम के मेघ पन्थ से स्वर्ग लूटने हम आते हैं। दूध–दूध ओ वत्स, तुम्हारा दूध खोजने हम जाते हैं।"

'दिनकर' में अदम्य साहस, अदम्य पौरूष, अदम्य दिव्य–दृष्टि है। इनकी सोच में, दृष्टि में कर्मठ व्यक्ति के लिए दुनियाँ में कुछ भी असम्भव, अलभ्य नहीं। जीवन का उद्देश्य समतल सड़क पर चलना नहीं वरन् ऊबड़–खाबड़, खन्दक, खाई, कंकरीले– पथरीले रास्ते से जाना जिसमें एक भी छायादार वृक्ष न हों, शीतल जल न हो अर्थात् दहकते अंगारों के पथ पर दहाड़ते हुए आगे बढ़ना दिनकर का उद्देश्य है। फिर सफलता उसके कदम चूम लेगी। कवि का विश्वास है एक दिन सुषुप्त समाज अवश्य जाग्रत होगा। चेतना आते ही लोगों से अधिकार की माँग करेगा और तब होगा अधिकार कर्तव्य का सुखद परिणय–संस्कार का निर्माण। आधुनिक मानव–विज्ञान के आँधी–तूफान में अपना असली मार्ग भूलकर बवण्डर के साथ उड़ने लगा है। हम एक दूसरे देश को नष्ट करने में ही सफलता की परिणति देखते हैं।

बीसवीं सदी (इक्सवीं सदी का आरम्भ अब गया) का सभ्य समाज किस तरह से शीघ्रता से पतन के रास्ते पर चल रहा है, इससे मनुष्य की मनुष्यता को चोट पहुँचती है। करुणा–कलित ह्रदय हो जाना स्वाभाविक है, मानवीय सद्भावना और कल्याण से उसका नाता बहुत हद तक टूट चुका है। साधना की सिद्धि मान लेने से जो खतरा समाज में पैदा हो रहा है, हम सभी उसके शिकार होंगे। 'कुरूक्षेत्र' में इन धारणाओं की सहज ढंग से अभिव्यक्ति हुई है –

"हाय रे मानव नियति के दास ! हार रे मनु–पुत्र अपना आप ही उपहास ! जा रहा तू किस दिशा की ओर हो निरूपाय लक्ष्य क्या, उद्देश्य क्या, क्या अर्थ, यह नहीं यदि ज्ञात तो विज्ञान का श्रम व्यर्थ"

'दिनकर' भौतिक सुख–स्वप्नों अथवा विज्ञान के विरोधी नहीं है, अपितु प्रसंगानुसार, अवसरानुकूल 'आलोक' अनन्य शक्ति कहा है, किन्तु हमारी अज्ञानता प्रयोगमूलक व्यवहार के कारण, असफलता के कारण विज्ञान वरदान के स्थान पर अभिशाप बनता जा रहा है। सम्प्रति, समाज विज्ञान का अंग है, और विज्ञान समाज की देन, इस .ष्टि से समझौता करना होगा।

महाभारत कालीन समाज विज्ञान ज्ञान तकनीकी के क्षेत्र में आज की तुलना में कहीं आगे है, चाहे वह शस्त्र का क्षेत्र हो या शास्त्र का, किन्तु निजी स्वार्थ, थोथे स्वाभिमान और सत्ता प्रलोभन के कारण बने बनाये सामञ्जस्य को एकाएक बिगाड़ दिया। एक और कुरूक्षेत्र से बचने के लिए आवश्यक है कि हम विज्ञान और मानव–कल्याण तथा बुद्धि और ह्रदय के बीच समरसता स्थापित करे। कल्याण का यही एक निर्विवाद सत्य है। 'दिनकर' कठोर एवं कोमल भावों के संवाहक है। ऐसे रचनाकारों की सांस्तिक चेतना का समष्टिगत पक्ष बहुत प्रबल होता है, किन्तु 'संस्ति' का सम्बन्ध जीवन के समष्टिगत पक्ष से ही नहीं होता, बल्कि वह उस व्यष्टि पक्ष से भी जुड़ी। रहती है, जो प्रेम और सौन्दर्य के रेशों से संगठित होता है। 'दिनकर' ने अपनी सीमाओं में संस्कृति के इन दोनों पक्षों को साध लिया था।

कुल मिलाकर 'दिनकर' ने प्रकृति को मूलतः प्रेरक शक्ति के रूप में स्वीकार किया है। अतः सीमा का अतिक्रमण नहीं किया, महाकवि दिनकर निर्विवादित 'राष्ट्रीय कवि' है। यदि बारीकी से निरीक्षण किया जाए तो इनके जीवन का

सम्पूर्ण दर्शन इसी चिन्तन पर आधारित है दिनकर ने आजाद भारत को देखा है, और यह भी देखा करीब से आजादी की दुर्दशा होते, स्वतन्त्रता के बावजूद स्वच्छन्द प्र.ति का समावेश हो जाने के कारण संवेद्य–भाव गरीबों के लिए शोषितों के लिए न जाने कहाँ 'छू मन्तर' होता जा रहा है।

असन्तोष क्लान्त की पीड़ा की स्थिति में 'परशुराम की प्रतीक्षा' जैसा आक्रोश मूलक रचना विवश होकर रचना पड़ा। इसमें कवि ने बढ़ती हुई ताकतों का विरोध किया, जो राष्ट्रीय प्रगति, और अखण्डता को खण्डित करना चाहते है। 'दिनकर' जो कहना चाहते थे, निर्भीक होकर सदैव कहते रहे, और करते रहे। अपने परम् हितैषी शुभ चिन्तक पंण्डित जवाहर लाल नेहरू की आलोचना करने से भी नहीं चूकते थे, जो कि राष्ट्र के प्रथम प्रधानमंत्री रहे– ''नेहरू शासन गडगोल है'' स्पष्ट है, निर्भीक, वाकपटु, दूरदर्शी, संवेदनशील, राष्ट्रप्रेमी, राष्ट्र–प्रेरक, राष्ट्र उन्नायक राष्ट्रीय कवि रामधारी सिंह दिनकर में 'राष्ट्रमहान है, न कि व्यक्ति' का भाव था। 'यथा नाम तथा गुण' का समन्वय स्पष्ट परिलक्षित होता है।

मर्यादा पुरूषोत्तम 'राम' की तरह 'धैर्य' धारण करने वाले, सिंह की तरह शक्तिशाली, सूर्य के समान प्रचण्ड प्रकाश करने वाले योद्धा भले ही हमारे समाज में न हों, किन्तु अपनी साहित्य–सर्जना द्वारा साहित्याकाश में 'दिनकर' के समान देदीप्यमान रहेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. दिनकर की साहित्य दृश्टि–डॉ0 सुशीला।
2. रामधारी सिंह दिनकर व्यक्तित्व और कृतित्व– खगेन्द्र ठाकुर।
3. दिनकर काव्य कला और दर्शन– डॉ0 प्रतिभा जैन।
4. दिनकर और कुरूक्षेत्र– आ0 रमाशंकर त्रिपाठी।
5. दिनकर के गीत– रामधारी सिंह 'दिनकर'।
6. पत्रिका– 1. कथा साहित्य, 2. साहित्य संदेश।

*****